पश्चिम बंगाल : माकपा नीत 'वाम मोर्चे' की हार

अप्रैल मई 2011 में भारत में 5 राज्यों में विधान सभा चुनाव सम्पन्न हुए। इन चुनावों में पं. बंगाल में माकपा के नेतृत्व वाले वाम मोर्चे को करारी हार का सामना करना पड़ा। 34 वर्षों से चला आ रहा उसका एकछत्र शासन समाप्त हो गया।

माकपा अपने स्थापना काल 1964 से ही संशोधनवाद की राह पर चल रही है। अपने दस्तावेजों में मार्क्सवाद–लेनिनवाद की दुहाई देने, क्रांति की ढेरों कसमें खाने के बावजूद हकीकत यही है कि क्रांति इसका कभी भी एजेण्डा नहीं रहा, कि अपने जन्म से ही यह एक संशोधनवादी पार्टी है।

इस लेख में हम माकपा की विचारधारा–कार्यक्रम आदि पर चर्चा करने के बजाय अपने को केवल पं. बंगाल में उसके शासन तक सीमित रखेंगे। माकपा शासन के दौरान पं.बंगाल की अर्थव्यवस्था, शहरी ग्रामीण जीवन, विभिन्न वर्गों का माकपा के प्रति दृष्टिकोण की चर्चा के साथ विभिन्न चुनावों में माकपा के प्रदर्शन के साथ उसके हालिया पतन को समझने का प्रयास करेंगे।

I

माकपा शासन व अर्थव्यवस्था के विविध पहलू

कृषि व ग्रामीण जीवन

माकपा का चुनावी घोषणा पत्र वर्षों से अपने द्वारा किये भूमि सुधारों का गुणगान गाता रहा है। माकपा द्वारा यह भूमि सुधार कार्यक्रम दो संयुक्त मोर्चा सरकारों के काल में और पिफर 1977–1992 के अपने शासनकाल में चलाया गया। इस भूमि सुधार कार्यक्रम से निश्चय ही ग्रामीण मेहनतकश अवाम का जीवनस्तर सुधरा जिसका पफायदा माकपा को अपने बढ़ते हुए ग्रामीण जनाधार के रूप में मिला। पर वास्तव में इन भूमि सुधारों का जितना गुणगान किया जाता है उसकी तुलना में यह बेहद सीमित स्तर का और माकपा के भ्रष्टाचार से रंगा हुआ था।

सत्ताशीन होने से पूर्व माकपा खुद भी बड़े पैमाने पर भूमि सुधारों का मुद्दा उठाकर आंदोलन करती रही थी। 1967 में पहली संयुक्त मोर्चा सरकार में शामिल माकपा को नक्सलबाड़ी आंदोलन के रूप में किसानों के क्रांतिकारी संघर्ष को भी झेलना पड़ा। ऐसे में इस आंदोलन को शान्त करने के साथ–साथ अपनी कतारों में पैदा हो रहे आक्रोश को ठंडा करने के लिए माकपा भूमि सुधार कार्यक्रम लागू करने की ओर बढ़ी। लेकिन इसके लिए उसने न तो कोई नया कानून बनाया न सिलिंग की कोई नई सीमा घोषित की। बल्कि कांग्रेस शासन के 1953 के जमींदारी उन्मूलन कानून व 1955 के भूमि सुधार कानून को ही अपनी प्रशासनिक मशीनरी के जरिये लागू करने का काम किया।

नक्सलबाड़ी आंदोलन का दबाव माकपा के ऊपर किस कदर था इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि उसने नारा ही दे दिया फनक्सलबाड़ी का रास्ता छोड़ो सोनारपुर के दिखाये रास्ते को अपनाओ (Shun the Path of Naxalbari and opt the path shown by Sonarpur), सोनारपुर दक्षिण 24 परगना का वह क्षेत्र था जहां भूमि सुधार कार्यक्रम सबसे पहले लागू किया गया।

1972 में पुनः सत्तानशीन हुई कांग्रेस को भी जनान्दोलन के दबाव में कुछ कानूनी संशोधनों की ओर बढ़ना पड़ा। 1973 में उसने भूमि सुधार कानून में संशोधन कर सीलिंग की अधिकतम सीमा नीचे गिराकर 17ण्29 एकड़ कर दी। इसके साथ ही उसने बटाईदारों (Sharecropper) को उपज का उचित हिस्सा दिलाने के लिए [75:25 (For lessee : lesseor) बटाईदार : बटाई पर भूमि देने वाला, कानूनी प्रावधान बना दिया। लेकिन पहले की कांग्रेस सरकारों की तरह इस सरकार की भी कोई दिलचस्पी कानूनों को व्यवहार में उतारने में नहीं थी।

1977 में जब माकपा सत्ता पर काबिज हुई तो उसने वास्तव में 1973 के कानून को ही लागू करने का काम किया। इसको लागू कराने में उसने पहले अपने किसान संगठनों और बाद में पंचायतों का भरपूर उपयोग किया। इसके साथ ही आपरेशन बर्गा कार्यक्रम के तहत उसने बर्गादारों ;बंटाईदारोंद्ध को रजिस्टर्ड कर भूमि पर खेती करने के उनके अधिकार को सुरक्षित किया।

माकपा के भूमि सुधार कार्यक्रम के बड़बोलेपन की हकीकत इसी से बयां हो जाती है कि बंगाल की कुल कृषि योग्य भूमि के मात्र 7ण्92: का ही पुनर्वितरण किया गया। इसमें भी एक बड़ा हिस्सा बेनामी जमीन के वितरण का था। यानि कि जमींदारों–बड़े किसानों से सीलिंग की जमीन छीनकर भूमिहीनों में बांटने का हिस्सा और भी कम था।

माकपा द्वारा अपने भूमि सुधार कार्यक्रमों के द्वारा 90 के दशक के मध्य तक 10.4 लाख एकड़ भूमि का वितरण 25 लाख परिवारों में किया गया। इसमें भूमि हासिल करने वाले 55% लोग अनुसूचित जाति व जनजाति के लोग थे। इसी तरह 16 लाख बटाईदारों को रजिस्टर्ड कर उनके 11 लाख एकड़ भूमि पर खेती के अधिकार को सुरक्षित किया गया।

हालांकि यह भूमि सुधार आधा–अधूरा था पर बाकि भारत की तुलना में यह कहीं ज्यादा व्यापक था। भारत में भूमि सुधार कार्यक्रमों के तहत मात्र 1.79% भूमि का पुनर्वितरण किया गया जबकि बंगाल में यह 7.92% था।

तालिका –1 तीन दशकों में पं.बंगाल में भूमि के वितरण की बदलती तस्वीर को दिखाती है। तालिका से स्पष्ट है कि लगभग 95% किसान दो हेक्टेअर से कम भूमि के मालिक हैं और उनकी भूमि कुल भूमि का 70% है। हालांकि भूमि के घटते आकार में सुधारों के साथ–साथ परिवार में अगली पीढ़ी में भूमि के बंटवारे से उसके आकार के छोटा होने का कारक भी शामिल है।

तालिका–1						
पश्चिमी बंगाल में कृषि भूमि का वितरण						
भूमि का आकार	1971-72		1982		1992	
	भूमि के मालिकों का प्रतिशत	भूमि का प्रतिशत	भूमि के मालिकों का प्रतिशत	भूमि का प्रतिशत	भूमि के मालिकों का प्रतिशत	भूमि का प्रतिशत
1.01 हेक्टेयर से कम	77.62	27.08	81.6	30.33	85.88	41.29
1.01 हेक्टेयर – 2 हेक्टेयर	12.64	25.69	11.5	28.77	9.48	28.11
2.01 हेक्टेयर – 4 हेक्टेयर	7.3	27.72	5.54	27.23	3.94	22.98
4.01 हेक्टेयर – 10 हेक्टेयर	2.39	18.61	1.28	12.12	0.71	7.62
10 हेक्टेयर से ज्यादा	0.05	0.7	0.08	1.54	0	0

स्त्रेत : नेशनल सेम्पल सर्वे 26,37,48 राउंड

भूमि सुधार और पंचायती प्रणाली ने माकपा के ग्रामीण जनाधार का निर्माण किया। पंचायतों और माकपा के किसान–मजदूर संगठनों के आपसी सम्बंधों ने ऐसा तानाबाना खड़ा किया कि जिंदा रहने या सुधारों का कुछ लाभ हासिल करने के लिए हर मेहनतकश का माकपा की ज्यादतियों पर चुप्पी साधना या इस ताने बाने का हिस्सा बनना अनिवार्य हो गया। जो कोई भी माकपा कार्यकर्ताओं की नीति का विरोध करता उसे पंचायतों के जरिये सुधारों–सुविधाओं से वंचित कर अलगाव में डाल दिया जाता रहा। इस तरह पं.बंगाल में **80** के दशक की शुरुआत से ही ग्रामीण जीवन माकपा की तानाशाही के अधीन आ चुका था। इस प्रक्रिया में माकपा के जनसंगठनों ने गुण्डावाहिनी का चरित्र ग्रहण कर जोर–जबरदस्ती का भी पर्याप्त सहारा लिया। गांवों से विपक्षी दलों का ही नहीं माकपा ने अपने सहयोगी दलों का भी लगभग सपफाया कर दिया।

पंचायतों पर माकपा के वर्चस्व के चलते भूमि वितरण, सरकारी अनुदान–अन्य राहत कार्यक्रमों का लाभ हासिल करने की शर्त माकपा के संगठनों में शामिल होना हो गया। अधिकतर ही भूमि वितरण माकपा समर्थकों को किया जाता रहा। अपना जनाधार बढ़ाने के लिए भूमि के बेहद छोटे–छोटे टुकड़े अधिक संख्या में लोगों को बांटे जाते रहे। अक्सर ही अपने विरोध में खड़े लोगों की भूमि व बंटाईदारी छीनने की हरकत भी माकपा की लम्पट वाहिनी करती रही।

ग्रामीण जीवन पर माकपा की इस जकड़न का ही परिणाम यह हुआ कि '**80** व **90**' के दशक में ढेरों पंचायतों में माकपा प्रतिनिधि निर्विरोध तक चुने जाते रहे। यहां तक कि अपने सहयोगी पफारवर्ड ब्लाक तक को जिन क्षेत्रों में माकपा विधायक–सांसद का टिकट देती थी वहां भी पंचायतों में पफारवर्ड ब्लाक को अपने प्रत्याशी खड़ा करने की उसने छूट नहीं दी।

माकपा अपने को मजदूरों–किसानों की पार्टी घोषित करते हुए अपने सभी कृत्यों को भूस्वामी पूंजीवादी तबकों के विरुद्ध साबित कर जायज ठहराती रही। पर वास्तविकता इससे कोसों दूर है। यह बात सही है कि सत्तानशीन होने से पूर्व माकपा का आधार मजदूरों व गरीब किसानों के बीच था। पर सत्तानशीन होने के बाद उसने जिस तरह की नीति अख्तियार की, खासतौर पर पंचायतों पर अपना वर्चस्व कायम करने के लिए की गयी तीन–तिकड़मों के चलते ग्रामीण बंगाल के सम्पत्तिधारी वर्चस्वशाली लोग अधिकाधिक माकपा में शामिल होते गये और वहां वर्चस्व के पदों पर काबिज होते गये। '**80** के दशक से शुरू हुई यह प्रक्रिया '**90** व **2000** के दशक में खासी तेज हो गयी। हालांकि निचले स्तर पर माकपा को वोट देने वाली आबादी में बड़ा हिस्सा अभी भी खेतिहर मजदूरों–गरीब किसानों का ही था पर पंचायतों में माकपा पार्टी व उसके ग्रामीण संगठनों में पूंजीवादी तत्व अधिकाधिक नेतृत्वकारी स्थिति में पहुंचते चले गये। इस तरह से माकपा का ढांचा और ग्रामीण बंगाल के वर्गीय ढांचे दोनों में ही पूंजीवादी तत्वों की प्रधानता स्थापित हो गयी।

माकपा गरीब किसानों के ताकतवर होने का दावा करती रही जबकि होता इसका उल्टा रहा। पं.बंगाल के दो जिलों मिदनापुर, बर्दवान के एक अध्ययन के अनुसार '**90** के दशक के अंत में इन जिलों की **6019** ग्रामों में पंचायत सदस्यों में **53ण8ः** सदस्य **6** एकड़ से अधिक भूमि के मालिक थे जबकि खेतिहर मजदूर सदस्य मात्र 8.3% थे। कमोबेश यही स्थिति समूचे बंगाल की थी।

ग्रामीण बंगाल में माकपा के धीरे–धीरे धनी किसानों की पार्टी में रूपान्तरित होते जाने और उसके शासन में अतीव शोषण का शिकार खेतिहर मजदूर–गरीब किसानों ने माकपा से विद्रोह कर अन्य दलों की ओर रुख '**90** के दशक की शुरुआत तक नहीं किया तो इसमें ग्रामीण बंगाल में माकपा की जकड़न के साथ–साथ '**80** के दशक में प. बंगाल में कृषि उत्पादन में आयी तेज वृद्धि भी कारण बनी। तालिका–**2** में प्रदर्शित आंकड़ों से स्पष्ट है कि '**80** के दशक में सभी खाद्यान्नों की वृद्धि दर खासी तेज थी। इस तेज गति ने ग्रामीण जनजीवन को एक हद तक खुशहाल बनाया परिणामतः माकपा की तमाम ज्यादतियों के बावजूद '**90** के दशक की शुरुआत तक मेहनतकश इस खुशहाली का श्रेय माकपा को देते रहे।

तालिका–2									
प.बंगाल में प्रमुख फसलों की औसत वृद्धि दर									
काल अंतराल	खाद्यन्न	चावल	गेहूँ	कुल अनाज	कुल दालें	कुल तिलहन	आलू	गन्ना	जूट
1959-69	4.9	4.5	46.5	5.1	1.6	6.6	2.5	9.4	18.1
1970-79	0.8	0.4	8.8	0.9	-0.9	6.5	14.5	-3.9	3.6
1980-89	6.9	8.4	0.1	7.3	-2.3	18.8	9.3	2.2	6.3
1990-99	3.7	2.5	4.4	2.5	-3.0	0.03	6.4	14.2	5.0

स्त्रेत : Prepared from the Data of Bureau of Applied Economics of Statistics,Govt of W.B.(EPW Dec 27,2008)

इस तालिका से स्पष्ट है कि चावल जो कि बंगाल की सबसे प्रमुख पफसल है '80 के दशक में इसका उत्पादन तेजी से बढ़ा। '80 के दशक में इस वृद्धि के पीछे भूमि सुधार कार्यक्रमों के साथ–साथ सरकारी संस्थानों द्वारा उपलब्ध ट्टण, कृषि आगतों ;बिजली, पानीद्ध की कीमतों पर नियंत्रण, उच्च उत्पादकता के बीज आदि की भूमिका रही। पर '90 का दशक शुरू होते ही स्थिति बदलनी शुरू हो गयी।

'91 में केन्द्र के स्तर पर जारी नई आर्थिक नीतियों, 1995 में विश्व व्यापार संगठन ;ज्द्ध में भारत के शामिल होने से समूचे देश में ही कृषि उत्पादन वृद्धि दर ठहराव का शिकार होने लगी। माकपा सरकार ने अपने द्वारा शासित राज्य पं.बंगाल में इन नीतियों की मार से गरीब किसानों को बचाने के बजाय विकास के नाम पर इन नीतियों को बढ़–चढ़ कर लागू करना शुरू किया। यह देखते हुए कि बंगाल की अधिकांश खेती छोटे–मझौले किसानों के हाथ में है, ये नई नीतियां किसानों की बड़े पैमाने पर तबाही का कारण बनने लगी।

बिजली, पानी, खाद, बीजों की मूल्य वृद्धि, निवेश के प्रोत्साहन में कमी, उपज कीमत का बाजार पर निर्भर होते जाना आदि कारकों से कृषि उत्पादन में वृद्धि दर में '90 के दशक से जारी गिरावट 2000 के दशक में भी बनी रही। छोटी किसानी कर जीवन निर्वाह करना अधिकाधिक कठिन होता चला गया। ढेरों किसान जमीन बेच शहरों की ओर रोजगार की तलाश में जाने को मजबूर हो गये।

'90 के दशक से जारी व समूचे देश में महसूस किये गये कृषि संकट से बंगाल भी अछूता नहीं रहा। कृषि उत्पादन वृद्धि दर में भारी कमी के साथ छोटी किसानी की तबाही, अधिकाधिक ट्टण लेकर बाजार के लिए उत्पादन, कुल उत्पादन में कृषि का हिस्सा घटने के बावजूद एक बड़ी आबादी की कृषि पर निर्भरता ने गांवों–देहातों में भारी पैमाने पर कंगालीकरण पैदा किया। इस कंगालीकरण ने भी माकपा सरकार के प्रति छोटे सीमान्त किसानों के गुस्से को बढ़ाया।

छोटी किसानी की बदहाली के बावजूद भूमि सुधार के दौर में भूमि के कुछ टुकड़े पा जाने की आशा में देहात की भूमिहीन आबादी माकपा के साथ चिपकी रही पर कालान्तर में भूमि सुधार को तिलांजली दे भूअधिग्रहण की ओर बढ़ने से भूमिहीनों की इस आशा ने भी दम तोड़ दिया।

'90 के दशक की मध्य से ही पं. बंगाल की माकपा सरकार ने भूमि सुधार कार्यक्रम को तिलांजली दे, बेनामी पड़ी भूमि पर औद्योगीकरण की बातें शुरू कर दीं। कृषि की इस बदहाली के चलते ग्रामीण बंगाल में मेहनतकशों का माकपा शासन के प्रति आक्रोश पैदा होना शुरू हो गया। जिस हद तक यह आक्रोश बढ़ता गया उस हद तक इससे निपटने के लिए माकपा का पंचायत–संगठन–गुण्डावाहिनी का तानाबाना अधिकाधिक निरंकुश होता चला गया। इसने अपनी बारी में ग्रामीण मजदूरों–किसानों का माकपा के प्रति गुस्सा और बढ़ाया। पंचायत चुनावों में माकपा का गिरता मत प्रतिशत इसी का परिणाम था।

माकपा के वर्चस्व के चलते और विपक्षी कांग्रेस ;जो कि स्वयं उदारीकरण–वैश्वीकरण की प्रस्तोता थीद्ध के इस गुस्से को स्वर देने में कोई रुचि न होने के चलते '90 के दशक के अंत तक ग्रामीण बंगाल में अपने घटते मत प्रतिशत के बावजूद माकपा को कोई बड़ी चुनौती नहीं मिल पायी। पर '90 के दशक के अंत से तृणमूल कांग्रेस ने ग्रामीण बंगाल में अपना आधार पफैलाते हुए किसानों के गुस्से को स्वर देना शुरू कर दिया। अपने छीने जाते वर्चस्व को माकपा की गुण्डावाहिनी ने खूनी जंग से दबाना चाहा पर तृणमूल कांग्रेस ने भी इसका निरन्तर जवाब देने का प्रयास किया। 2000 का समूचा दशक ही बंगाल के गांवों में माकपा व तृणमूल कार्यकर्ताओं की खूनी टक्करों का गवाह बनता रहा।

कृषि की बदहाल स्थिति में उद्योगों के लिए कृषि भूमि के अधिग्रहण की माकपा सरकार की नीति ने आग में घी का काम किया। अपनी आजीविका के आसरे भूमि के छीने जाने ने उनके माकपा के प्रति धीरे–धीरे उपफन रहे गुस्से को एक झटके से भड़का दिया। तृणमूल कांग्रेस ने नंदीग्राम–सिंगूर में इस गुस्से को स्वर देने में पहलकदमी लेकर ग्रामीण बंगाल से माकपा की विदाई की पटकथा तैयार कर दी। 2011 के चुनावों में यह पटकथा अंजाम तक जा पहुंची जब माकपा को करारी हार झेलनी पड़ी।

इस पूरे काल में माकपा द्वारा ग्रामीण बंगाल में जनान्दोलन विकसित करने के 1977 के अपने चुनावी वायदे को पूरी तरह तिलांजली दे दी गयी। फ्वामपंथ सरकार संग्राम का हथियारय नारा भुला दिया गया। बल्कि 34 वर्षों के शासन के दौरान वह अधिकाधिक दमन के हथियार में बदलती चली गयी।

केन्द्र में माकपा के समर्थन से ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का निर्माण हुआ। परन्तु पं.बंगाल के गांवों में इसे लागू करने में माकपा ने कभी भी रुचि नहीं दिखायी। परिणामस्वरूप इस योजना के जरिये ग्रामीण मेहनतकशों को राहत मुहैया कराने में पं. बंगाल देश के सबसे खराब प्रदर्शन वाले राज्यों में से एक रहा।

'90 के दशक में किसानों की तबाही जनगणना की इस रिपोर्ट से सापफ हो जाती है। 1991 में प्रदेश में किसानों की संख्या 64.07 लाख थी जो 2001 में घटकर 56.54 लाख रह गयी। इसके उलटे इसी काल में खेतीहर मजदूरों की संख्या 54.81 लाख से बढ़कर 73.63 लाख हो गयी। (Statistical Handbook 2004 West Bengal,BASE , Govt of W B)

उद्योग धन्धे व शहरी जनजीवन

औद्योगिक मजदूरों में माकपा का आधार CITU की स्थापना के समय से ही अच्छा–खासा रहा है। '70 के दशक में इसने मजदूरों के तमाम आर्थिक संघर्षों को लड़कर अपने आधार में और विस्तार किया। मजबूत ट्रेड यूनियन संघर्षों की भूमि रहने का एक कारण यह भी था कि आजादी के समय बंगाल उद्योगों के मामले में देश के अग्रणी राज्यों में से एक था। परन्तु आजादी के बाद से ही यहां नये उद्योग लगने की रफ़्तार खासी धीमी रही। संगठित क्षेत्र के उद्योगों के उत्पादन व रोजगार में हिस्सेदारी में पं.बंगाल निरन्तर पिछड़ता चला गया। इस तथ्य को तालिका–3 से समझा जा सकता है।

तालिका–3												
औद्योगिक उत्पादन व रोजगार में हिस्सेदारी प्रतिशत में												
वर्ष / राज्य	1955-56		1966-67		1970-71		1997-98		2001-02		2007-08	
	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन	रोजगार
प.बगाल	24	27	20	22	13.50	16.20	5.10	8.30	4.60	7.00	3.9	4.9
हरियाणा	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	4.70	3.70	4.5	4.9
आंध्र प्रदेश	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	5.4	4.7	6.6	11.60	6.6	10.0
कर्नाटक	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	N.A.	5.2	6.3	5.7	6.30	6.6	6.9
उत्तर प्रदेश	10.0	10.0	7.0	7.0	7.30	7.50	8.70	7.70	7.00	6.60	7.00	7.2
तमिलनाडु	8.0 (मद्रास)	9.0	9.0	9.0	10.2	10.9	10	12.8	9.8	14.10	9.60	14.8
गुजरात	-	-	N.A.	N.A.	9.7	9.1	12.9	8.8	15.3	9.20	16.10	10
महाराष्ट्र	31.0 (बम्बई= महाराष्ट्र गुजरात)	31.0	24.0	19.0	24.6	19.2	21.0	14.80	18.80	15.00	16.70	13.0
स्त्रेत : विभिन्न वर्षों के Annual Survey of Industries												

इस तरह से **55.56** में देश के औद्योगिक उत्पादन का **24:** उत्पादन करने वाला पं. बंगाल **2007.08** में **3ण्9:** औद्योगिक उत्पादन तक सिकुड़ गया।

उद्योगों की गिरती दशा माकपा के शासन काल में भी नहीं सुधरी। बहुत सारे विश्लेषक इसके लिए माकपा के द्वारा लड़े गये जुझारू आर्थिक संघर्षों को जिम्मेदार ठहराते हैं। पर वास्तव में माकपा ने **1977** में सत्ताशीन होते ही आर्थिक संघर्षों को एक तरह से तिलांजलि देकर वर्ग संघर्ष के स्थान पर वर्ग सहयोग की अपनी पुरानी नीति को और पुख्ता कर दिया। **1977** के बाद से ही पं. बंगाल में ट्रेड यूनियन संघर्षों में तीखी गिरावट दर्ज की गयी।

तालिका–4													
प. बंगाल में हड़ताल व तालाबंदी की संख्या													
वर्ष	1965	1970	1975	1976	1977	1978	1979	1980	1985	1987	1989	1991	**2008**
औद्योगिक विवाद का चरित्र													
हड़ताल	179	678	111	129	206	172	146	78	39	39	16	21	32
तालाबंदी	49	128	166	152	191	199	144	130	165	197	207	192	400
योग	228	806	277	281	397	371	290	208	204	236	223	213	432
स्त्रेत : Economic review,Govt of West Bangal, Various years													

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि **1977** के बाद से ही बंगाल में तालाबंदी अधिक होती चली गयी हैं और हड़तालों की संख्या गिरती चली गयी है। रोजमर्रा के ट्रेड यूनियन संघर्षों को तिलांजली देने के साथ ही माकपा ने पूंजीपतियों को श्रमिक असंतोष से एक तरह निश्चिंत कर दिया। ट्रेड यूनियनें अधिकाधिक पूंजीपति वर्ग के पक्ष में झुकती चली गयीं। पर इस सबसे भी पं. बंगाल में उद्योगों की गिरती दशा पर रोक नहीं लगी। लाक आउट की संख्या निरंतर बढ़ती रही।

जाहिर है उद्योगों की इस गिरावट के पीछे ट्रेड यूनियन आंदोलन के बजाय पं.बंगाल में कमजोर आधारभूत ढांचा ;बिजली–सड़कद्ध, कच्चे माल के कम स्रोत सरीखे अन्य कारक ही अधिक जिम्मेदार हैं।

संगठित क्षेत्र में रोजगारों की संख्या में भी पं.बंगाल में लगातार गिरावट दर्ज की गयी। **1980** में संगठित क्षेत्र के कुल रोजगार **26. 64** लाख थे जो **2004** में **22.30** लाख रह गये। अगर इन कुल रोजगारों में सार्वजनिक क्षेत्र की बात की जाय तो '**80** के दशक में इसमें मामूली वृद्धि हुई। **'90** के दशक में यह लगभग **16** लाख पर स्थिर रहे जबकि **2000** के दशक में इसमें कुछ गिरावट दर्ज की गयी। निजी क्षेत्र के रोजगार '**80** के दशक व '**90** के दशक की शुरुआत में गिरावट के साथ **7.5** लाख पर स्थिर हो गये।

असंगठित क्षेत्र की छोटी–छोटी मैन्युपफैक्चरिंग इकाईयां ही पं.बंगाल का ऐसा क्षेत्र था जो अपेक्षाकृत तेजी के साथ विस्तारित हुआ। कृषि से निकली बेशी आबादी इन्ही इकाईयों में खपाने का प्रयास पं.बंगाल सरकार ने किया। कुल मैन्युपफैक्चरिंग रोजगारों में **91:** वर्ष **2000.01** में असंगठित मैन्युपफैक्चरिंग इकाईयों में मिल रहा था। यही एक क्षेत्र है जिसमें '**90** के दशक में विस्तार हुआ है। करीब **56.68** लाख

लोग 2000–01 में इसमें कार्यरत थे। संख्या व रोजगार दोनों के मामले में पं.बंगाल की ये इकाइयां राज्य को अग्रणी स्थान पर रखे हुए हैं। तालिका 5 से स्पष्ट है कि इस मामले में अब तक अग्रणी रहे उ.प्र. को उसने पीछे छोड़ दिया है।

तालिका–5

असंगठित क्षेत्र की मैनुफैक्चरिंग इकाइयां व रोजगार (सैकड़े में)

वर्ष		ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	कुल
प.बंगाल	यूनिट	15312	3778	19090	21237	6470	27711
	रोजगार	33697	10096	43793	44161	14521	58682
उत्तर प्रदेश	यूनिट	18359	6789	25148	16313	6588	22901
	रोजगार	41518	17810	59328	36826	17210	54036
भारत	यूनिट	104971	40070	145041	119346	50895	170241
	रोजगार	221260	110767	3320727	239857	130951	370808

आंकड़ों में मैन्युपफैक्चरिंग इकाइयों में वृद्धि के बावजूद वास्तविकता यही है कि बंगाली मेहनतकश जनता अधिकतर ही इस दिशा में रोजगार का अन्य कोई विकल्प न होने के चलते ही बढ़ रही है। 90 प्रतिशत से अधिक इकाइयां इस तरह की हैं कि उनमें केवल परिवार के ही सदस्य कार्य कर रहे हैं। वास्तव में उनकी वार्षिक कमाई किसी तरह जिंदा रहने लायक मात्र ही है।

औद्योगीकरण माकपा सरकार की '80 के दशक से ही चाहत रही है पर उस समय माकपा के प्रयास बंद पड़ी पफैक्टरी चलाने, पलायन कर रही पफैक्टरी रोकने के ही अधिक रहे जिसमें उसे विशेष सपफलता नहीं मिली। ट्रेड यूनियन आंदोलन को मालिक पक्षधर बना माकपा अधिकाधिक पूंजी के पक्ष में और मजदूर विरोधी होती गयी।

'91 के बाद देश के पैमाने पर नई आर्थिक नीति लागू हुई तो केन्द्रीय स्तर पर नवउदारवाद की जिन नीतियों के खिलापफ माकपा खड़ी होने का ढोंग करती थी पं.बंगाल में उन्हीं नीतियों को वह बढ़–चढ़कर लागू करने लग गई। 1994 में राज्य में नई औद्योगिक नीति ज्योति बसु सरकार ने घोषित की। इसके तहत देशी–विदेशी पूंजीपतियों को निवेश का खुला आमंत्रण दिया गया। तमाम छूटों और राहतों से उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास किया गया। कालान्तर में सेज (SEZ) विकसित करने का भी माकपा सरकार ख्वाब देखने लगी।

2000 के दशक में इन देशी–विदेशी पूंजीपतियों को बंगाल में लाने की होड़ में बुद्धदेव भट्टाचार्य ने दिन–रात एक कर दिया। इस पूरे दशक में मजदूरों को हासिल सभी सुविधायें, श्रम कानून बेमानी होते गये, उनका ठेकाकरण बढ़ता गया। बुद्धदेव को पूंजी निवेश के कुछ प्रस्ताव हासिल भी होने लगे। इन उद्योगों को भूमि मुहैय्या कराने के लिए '90 के दशक के मध्य से ही भूमि सुधार कार्यक्रम छोड़ चुकी माकपा सरकार ने जबरन भूमि अधिग्रहण से भी परहेज नहीं किया। नंदीग्राम–सिंगूर में किसानों के जुझारू प्रतिरोध को पहले तो सरकार ने कुचलना चाहा, ढेरों किसानों को मौत के घाट उतारने के बाद भी जब जनता पीछे नहीं हटी तो अंततः सरकार को पीछे हटना पड़ा।

तालिका . 6 '91 से 2006 तक विभिन्न राज्यों में पूंजी निवेश के प्रोजेक्ट और निवेशित राशि के आंकड़ों को दिखाती है। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि हालांकि बंगाल गुजरात–महाराष्ट्र से कापफी पीछे है पर वह इस दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है।

तालिका–6

आद्योगिक उद्यमियों के प्रस्ताव
(IEM - Industrial Enterpreneur Memoranda)
अगस्त 1991 से अक्टूबर 2006 के बीच (करोड़ रुपये में)

राज्य	IEM प्रतावित		IEM लागू	
	संख्या	निवेश राशि	संख्या	निवेश राशि
गुजरात	8242	352601	1121	68810
महाराट्र	12451	290855	961	29106
आन्ध्र प्रदेश	4734	199113	507	14525
तमिलनाडु	5798	139930	438	9638
उड़ीसा	1026	166877	52	1843
प.बंगाल	3844	85968	475	28963
कुल योग	68127	2214820	6383	239788

स्त्रेत : SIA Statistics in the DIPP, Ministry of India,GOI Website www.dipp.gov.in

इन पूंजी केन्द्रित उद्यमों से बेहद थोड़ी मात्रा में ही रोजगार मुहैय्या होना है। '90 के दशक के बाद से ही शहरी जनता में माकपा शासन के प्रति आक्रोश तेज होना शुरू हो गया था। बढ़ती बेरोजगारी एक ऐसा कारक था जो शहरी युवाओं को उनके अंधकारमय भविष्य

की तस्वीर दिखा रहा था। बेरोजगारी की सरकारी दर 2002.03 के वार्षिक सर्वे के अनुसार 93.94 के 10ण्06ः से बढ़कर 1999.00 में 14ण्99ः जा पहुंची थी। 70 लाख से अधिक बेरोजगार बंगाल की असली हालत बयां कर देते हैं। मजदूर वर्ग माकपा के ट्रेडयूनियन नेताओं की गद्दारी और तालाबंदी से समाप्त होते अपने रोजगार से पहले से ही आक्रोशित था।

हालांकि 1990 के दशक में शहरों में होटल, काम्पलैक्स सरीखे क्षेत्रों में हुए निवेश से माकपा ने मध्यम वर्ग के एक हिस्से को अपनी ओर आकर्षित जरूर किया पर उसका मजदूरों–मेहनतकशों के बीच आधार सिकुड़ता चला गया।

माकपा के शासनकाल में राज्य की समूची अर्थव्यवस्था निरन्तर चरमराती गयी। राज्य पर कर्ज का बोझ लगातार बढ़ता चला गया। 98.99 में राज्य अपने कुल खर्च का 31ण्82ः अपने कर्जों की ब्याज अदायगी में खर्च कर रहा था। शहरों में माकपा के प्रति बढ़ता आक्रोश विभिन्न चुनावों में माकपा के घटते शहरी मत प्रतिशत के रूप में अभिव्यक्त भी होता रहा पर ग्रामीण वोट के चलते माकपा की सत्ता को 2011 तक निर्णायक चुनौती नहीं मिली।

शहरी प्रशासन की मशीनरी पर माकपा का नियंत्रण गावों जैसा मजबूत तो नहीं था पर यहां भी पुलिस–प्रशासन व माकपा कार्यकर्ता मिलजुल कर काम करते रहे थे। माकपा की अपने विरोध की किसी भी आवाज को गला घोंटने की नीति शहरों में भी लागू की गयी थी। विपक्षी दलों के किसी मुद्दे पर बन्द–प्रदर्शन का माकपा गुण्डावाहिनी पुलिस प्रशासन के साथ मिल कर असपफल करने में जुट जाती थी। वहीं माकपा के बन्द प्रदर्शनों को सपफल बनाने में पूरा सरकारी अमला एड़ी चोटी का जोर लगा देता था।

दमन की कार्यवाही महज नंदीग्राम–सिंगुर–लाल गढ़ में ही नहीं हर रोज अंजाम दी जाती रही थी। ज्योति बसु कार्यकाल में कलकत्ता शहर के हजारों पुफटपाथों के दुकानदारों को रातों–रात पुलिस व माकपा के गुण्डों ने हटा दिया ताकि ब्रिटेन के पूर्व प्रधान मंत्री जान मेजर के नेतृत्व में 52 ब्रिटिश बड़े पूंजीपतियों के स्वागत के लिए कलकत्ता शहर को चमकाया जा सके।

रिजवानुर रहमान की मौत से लेकर राशन की दुकानों में भ्रष्टाचार, दिनहाटा पफायरिंग तक दमन व भ्रष्टाचार में आकंठ डूबी माकपा सरकार के खिलापफ जनता संगठित हो सड़कों पर उतरने लगी थी।

पार्टी कार्यकर्ताओं का भ्रष्टाचार में लिप्त होना सामान्य बात बन चुकी थी मजदूर वर्ग की 'पार्टी' के नेता अब शापिंग काम्प्लैक्स के मालिक, बड़े बिल्डरों, ठेकेदारों में तब्दील हो खासी अय्याशी का जीवन जी रहे थे। शहरों में भी गांव की तरह हर योजना में लाभ सबसे पहले माकपा कार्यकर्ताओं की जेब में जाता था।

II
भूमि अधिग्रहणः नन्दीग्राम, सिंगुर व ममता कारक

उद्योगों के लिए भूमि अधिग्रहण की नीति '90 के दशक की शुरुआत से ही परवान चढ़ने लगी थी। खड़गपुर में 1992 में टाटा मेटालिक्स नाम से पिग आयरन मैन्युपफैक्चरिंग प्लाण्ट स्थापित किया गया इसके लिए कुल 217.23 एकड़ भूमि अधिग्रहित की गयी। इसके 3 वर्ष बाद खड़गपुर में ही बिड़ला के पिग आयरन प्लाण्ट सेंचुरी टेक्सटाइल एण्ड इण्डस्ट्रियल लिमिटेड (CTIL) के लिए 525 एकड़ भूमि के अधिग्रहण को प्रस्तावित किया गया। इस अधिग्रहण के खिलापफ किसानों ने जुझारू संघर्ष किया परन्तु उन्हें किसी भी प्रमुख दल का समर्थन हासिल नहीं हुआ। करीब 358 एकड़ भूमि अधिग्रहण के पश्चात अप्रैल 1997 में बिड़ला की कम्पनी ने उपरोक्त प्लाण्ट लगाने का इरादा यह कहकर त्याग दिया कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चीन, आस्ट्रेलिया के आने के चलते यहां पिग आयरन पैदा करना लाभकारी नहीं रह गया। आज भी यह 358 एकड़ भूमि का बड़ा हिस्सा जो कभी कृषि भूमि था बेकार व खाली पड़ा है।

उपरोक्त भूमि अधिग्रहण के लगभग एक दशक बाद 2007–08 में जब नंदीग्राम व सिंगुर में सलेम ग्रुप व टाटा के प्लाण्ट के लिए भूमि अधिग्रहण परवान चढ़ाया गया तो किसानों–मजदूरों (खेतिहर) का आक्रोश कहीं अधिक व्यापक रूप में पफूट कर सामने आया। माकपा ने जिस तरह दमन के जरिये जोर–जबरदस्ती से जमीन हथियानी चाही उससे अभी तक ढंके छिपे तरीके से चल रही उसकी पफासिस्ट कार्यशैली जगजाहिर हो गयी।

अब तक प्रमुख विपक्षी पार्टी के रूप में स्थापित हो चुकी तृणमूल कांग्रेस व उसकी नेता ममता बनर्जी ने सिंगूर व नंदीग्राम में किसानों के पक्ष में खड़े होकर माकपा सरकार को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया। ममता ने ;जो कि किसानों के हितों की कहीं से रहनुमा नहीं हैद्ध माकपा विरोध के इस मौके का भरपूर पफायदा उठाया।

यहां तक कि जब लालगढ़ में भाकपा ;माओवादीद्ध पार्टी के सहयोग से आदिवासी जनता अपने क्रूर दमन के खिलापफ उठ खड़ी हुई तो भी ममता ने आदिवासी जनता को अपने पक्ष में करने के लिए माओवादी पार्टी के साथ खड़े होने में भी कोई हिचकिचाहट नहीं दिखायी।

नंदीग्राम–सिंगूर–लालगढ़ में दमन ने बंगाल व राष्ट्रीय स्तर के मीडिया में कापफी कवरेज पायी। माकपा की गुण्डावाहिनी के काले कारनामे देख माकपा से जुड़े ढेरों बुद्धिजीवी कलाकार माकपा से अलग हो गये। माकपा को हराने व तृणमूल कांग्रेस को जिताने का आह्वान कर पिफजा को माकपा विरोधी बनाने में उन्होंने एक भूमिका निभायी।

एक कुशल राजनीतिज्ञ की तरह ममता ने रेलवे मंत्रालय संभालते हुए रेलवे प्रोजेक्टों में पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप आगे बढ़ाकर और बाद में पिफक्की के पूर्व चेयरमैन को चुनाव लड़वा कर भारत के बड़े पूंजीपति वर्ग को आश्वस्त किया कि वह कहीं से भी उनकी विरोधी नहीं है। और आर्थिक सुधारों को आगे बढ़ाने का काम करती रहेगी। उसने ढेरों पूर्व नौकरशाहों–पुलिस अधिकारियों को अपनी पार्टी में शामिल कर चुनाव में खड़ा किया। इस सबके चलते नंदीग्राम–सिंगूर में किसानों के पक्ष में खड़े होने के बावजूद भारत के पूंजीपति वर्ग ने तृणमूल कांग्रेस को कहीं से अपना विरोधी नहीं माना।

लेकिन माकपा की हार को महज नंदीग्राम–सिंगूर का परिणाम नहीं माना जाना चाहिए। पहले वर्णित ग्रामीण व शहरी मेहनतकशों का आक्रोश–माकपा के शासन व दमन के खिलापफ जनता का बढ़ता गुस्सा उनकी बदहाल होती जिंदगी ही वह कारक था जिसने 2011 के चुनावों में माकपा की हार की पटकथा तैयार की। हां! नंदीग्राम–सिंगूर ने ग्रामीण व शहरी जनमानस को माकपा के तानाशाहना तंत्र के खिलापफ एकजुट खड़ा करने–प्रतिरोध करने का साहस जरूर पैदा किया। इन अर्थों में सिंगूर–नंदीग्राम–लालगढ़ ने माकपा की हार में उत्प्रेरक की भूमिका अदा जरूर की।

III
विभिन्न चुनावों का लेखा जोखा

तालिका–7 में 1967 से 2011 तक विभिन्न चुनावों में माकपा, कांग्रेस व तृणमूल कांग्रेस की सीटों की संख्या व मतों का प्रतिशत प्रदर्शित किया गया है। अगर हम चुनावों के मोटा–मोटी रुझानों की बात करें तो निम्न बातें स्पष्ट हैं।

तालिका–7

पं. बंगाल में चुनाव नतीजे

वर्ष	लड़ी गयी सीटों की संख्या	जीती गयीं सीटें	कुल मतों का प्रतिशत	लड़ी गयी सीटों में मतों का प्रतिशत
1967	CPI(M)-135 INC-280	CPI(M)-43 INC-127	CPI(M)-18.11 INC-41.13	CPI(M)-36.14 INC-41.13
1969	CPI(M)-97 INC-280	CPI(M)-80 INC-55	CPI(M)-19.97 INC-41.12	CPI(M)-54.12 INC-41.32
1972	CPI(M)-208 INC-238	CPI(M)-14 INC-216	CPI(M)-27.45 INC-49.08	CPI(M)-35.92 INC-58.35
1977	CPI(M)-224 INC-290	CPI(M)-178 INC-20	CPI(M)-35.46 INC-23.02	CPI(M)-46.23 INC-23.29
1982	CPI(M)-209 INC-250	CPI(M)-174 INC-49	CPI(M)-38.49 INC-35.73	CPI(M)-53.77 INC-42.08
1987	CPI(M)-213 INC-294	CPI(M)-187 INC-40	CPI(M)-39.31 INC-41.83	CPI(M)-53.64 INC-41.83
1991	CPI(M)-213 INC-284	CPI(M)-189 INC-43	CPI(M)-36.87 INC-35.12	CPI(M)-49.98 INC-36.25
1996	CPI(M)-217 INC-288	CPI(M)-157 INC-82	CPI(M)-37.92 INC-39.45	CPI(M)-50.48 INC-40.21
2001	CPI(M)-211 INC-60 AITC-226	CPI(M)-143 INC-26 AITC-60	CPI(M)-36.59 INC-7.98 AITC-30.66	CPI(M)-49.96 INC-39.70 AITC-39.42
2006	CPI(M)-212 INC-262 AITC-257	CPI(M)-176 INC-21 AITC-30	CPI(M)-37.13 INC-14.71 AITC-26.64	CPI(M)-50.83 INC-16.51 AITC-30.30
2011	CPI(M)-213 INC-65 AITC-226	CPI(M)-40 INC-42 AITC-184	CPI(M)-30.08 INC-9.03 AITC-38.93	CPI(M)-…. INC-…… AITC-…….

स्त्रेत : Election Commission of India

कम्युनिस्ट पार्टी का आधार बंगाल में आजादी से पूर्व से मौजूद था। ट्रेड यूनियन संघर्षों व किसान आंदोलनों से यह आधार ग्रामीण व शहरी दोनों इलाकों के मेहनतकशों में था। देशव्यापी पैमाने पर 60 के दशक के उत्तरार्ध में चली कांग्रेस विरोधी लहर का पफायदा माकपा को 1967, 1969 के चुनावों में हुआ। तमाम राज्यों की तरह बंगाल में भी संयुक्त मोर्चा सरकारें कायम हुई। हालांकि केन्द्र की कांग्रेस सरकार के हस्तक्षेप व गठबंधन की आपसी उठा पटक के चलते ये अपना कार्यकाल पुरा नहीं कर पायीं।

1972 के चुनाव में पुनः पूरे देश में इंदिरा गांधी के पक्ष में लहर देखी गयी। इस दौरान बांग्लादेश की मुक्ति,'गरीबी हटाओ' नारे और राष्ट्रीयकरण के कदमों को जनता ने सकारात्मक रूप में लिया। परिणाम स्वरूप पुनः कांग्रेस बंगाल की सत्ता में लौटी और माकपा का वोट प्रतिशत बढ़ने के बावजूद सीटें घटकर 14 रह गयी। माकपा के मत प्रतिशत में बढ़ोत्तरी की प्रमुख वजह नक्सलबाड़ी आंदोलन के दबाव में चलाये भूमि सुधार कार्यक्रम रहा।

1972–77 तक कायम सिद्धार्थ शंकर राय के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार ने दमन और आतंक का तांडव कायम किया। नक्सलबाड़ी के क्रांतिकारियों और बाद में इमरजेंसी के बहाने आम जनता पर चले दमन चक्र से कांग्रेस के खिलापफ गुस्सा समूचे बंगाल में स्पष्ट था।

1977 में जनता के इसी गुस्से पर सवार होकर वाम मोर्चा भारी विजय के साथ सत्ता में पहुंचा। इसके बाद भूमि सुधार कार्यक्रम, आपरेशन बर्गा और पंचायती व्यवस्था के जरिये इसने ग्रामीण इलाकों में अपने आधार व पकड़ को मजबूत किया। '**80** के दशक में कृषि उत्पादन में भारी बढ़ोत्तरी से ग्रामीण मेहनतकशों के जीवन स्तर में सुधार आया। हालांकि '**77** के बाद से ही माकपा ने गांवों की सम्पत्तिशाली ताकतों को अपने संगठन में भर्ती करना शुरू कर दिया। उसके संगठन–पंचायत के वर्चस्व ने ग्रामीण मेहनतकशों के ऊपर पर्याप्त शिंकजा कायम कर लिया।

ट्रेड यूनियन आंदोलन को अधिकाधिक मालिकों के पक्ष में झुकाकर माकपा ने मजदूर वर्ग के खिलापफ खड़ा होने के साथ ही मजदूरों के बीच अपने चरित्र को अधिकाधिक उजागर करना शुरू किया।

परन्तु '**80** के दशक में माकपा मोटामोटी ग्रामीण व शहरी आधार को कायम रखने में सपफल हुई। **82ए 87** के चुनावों में यही बात प्रदर्शित हुई। कृषि व भूमि सुधारों का इन चुनावों में उसे पफायदा हुआ। पर '**90** का दशक आते–आते स्थिति बदलनी शुरू हो गयी।

'**90** के दशक में केन्द्र सरकार ने नई आर्थिक नीति का नारा बुलन्द किया। केन्द्र में नवउदारवाद की नीति का दिखावटी विरोध करते हुए माकपा ने पं.बंगाल में इन पर आगे बढ़ना शुरू किया। इन नीतियों के परिणाम स्वरूप बेरोजगारी –ठेकाकरण में भारी बढ़ोत्तरी हुई। भूमि सुधार कार्यक्रम रोक कर उद्योगों के लिए भूमि अधिग्रहण की शुरुआत हुई। खेती में आगतों की मूल्य वृद्धि व बाजार आधारित होने से बड़ी संख्या में गरीब किसान तबाह होने लगे। इस सबको चुनावों में अभिव्यक्त होना ही था और वह हुआ भी। हालांकि अभी भी वह माकपा को सत्ता से हटाने के लिए पर्याप्त नहीं था।

'**90** के दशक के शुरुआती हिस्से में शहरी व औद्योगिक इलाके में उसके वोट बैंक में गिरावट आनी शुरू हुई तो अंतिम हिस्से में ग्रामीण आधार भी प्रभावित होना शुरू हुआ। **1991** के विधान सभा चुनावों में माकपा के मत प्रतिशत में गिरावट मुख्यतः औद्योगिक क्षेत्रों में ज्यादा स्पष्ट थी। कांग्रेस ने औद्योगिक क्षेत्रों में अपना आधार पफैलाना शुरू किया। भाजपा ने भी एक हद तक बेरोजगारी–अयोध्या लहर से अपना वोट बैंक बढ़ाया।

1996 के विधान सभा चुनावों में कांग्रेस की सीटों की संख्या दुगनी हो **82** पर जा पहुंची। **9** सरकारी मंत्री चुनाव हार गये। मालदा, मुर्शीदाबाद के औद्योगिक इलाकों में कांग्रेस को बड़ी जीतें हासिल हुई। शहरी व औद्योगिक क्षेत्र से माकपा का आधार पर्याप्त रूप से खिसकने लगा था।

1990 के दशक के मध्य से ही माकपा ने राष्ट्रीय स्तर पर भाजपा को प्रमुख दुश्मन घोषित करना शुरू किया। कांग्रेस ने भी आसन्न खतरे को भांपते हुए अपने रिश्ते माकपा के साथ सुधारने शुरू किये। बंगाल में कांग्रेस नेताओं को माकपा के प्रति नरम रुख अपनाने को कहा गया। ममता बनर्जी सरीखे कांग्रेसी नेताओं को कांग्रेस का यह रुख पसन्द नहीं आया और उन्होंने कांग्रेस के इस निर्णय के खिलापफ काम किया। परिणामस्वरूप ममता ने कांग्रेस से निष्कासित हो तृणमूल कांग्रेस का गठन किया।

कांग्रेस के माकपा के प्रति नरम रुख ने माकपा के खिलापफ जनता के भीतर पैदा हो रहे आक्रोश को भुनाने में कांग्रेस के लिए बाधा पैदा की। माकपा के खिलापफ ज्यादा उग्र तेवरों के साथ ममता बनर्जी ने **1998** के लोकसभा चुनावों में 24.43% वोट प्राप्त कर कांग्रेस को प्रतिस्थापित करना शुरू कर दिया। **1999** के लोकसभा चुनावों में तो तृणमूल भाजपा गठजोड़ ने विधानसभा की आधे से अधिक सीटों पर माकपा से ज्यादा मत प्राप्त किये।

2001 के विधान सभा चुनावों में कांग्रेस को पीछे छोड़ तृणमूल कांग्रेस प्रमुख विपक्षी पार्टी के रूप में स्थापित हो गयी। इस चुनाव में हालांकि माकपा विरोधी वोटों के बंटे होने के चलते माकपा शासन को कोई बड़ी चुनौती पेश नहीं हुई। तृणमूल–भाजपा गठबंधन व कांग्रेस ने अलग–अलग चुनाव में शिरकत की।

2000 के दशक में माकपा के ग्रामीण आधार को तृणमूल कार्यकर्ताओं ने चुनौती देनी शुरू की। तृणमूल के बढ़ते आधार को रोकने के लिए गांवों में माकपा कार्यकर्ता खूनी संघर्ष से भी पीछे नहीं हटे। माकपा ने गांवों में अपने छिनते वर्चस्व के खिलापफ विपक्षी पार्टी के प्रचार–प्रसार को रोकने में गुण्डागर्दी से लेकर हर स्तर के प्रयास तेज कर दिये। पंचायत चुनावों में बगैर चुनाव के **2003** में **6800** सीटों पर माकपा प्रत्याशियों का निर्विरोध चुना जाना माकपा के बढ़ते आधार का नहीं उसकी गुण्डागर्दी की दहशत में दूसरी पार्टियों के अपने प्रत्याशी खड़े न करने को दिखाता हैं। देखें, तालिका–**8**

तालिका–8

पंचायत चुनाव में निर्विरोध चुने गये प्रतियाशियों की संख्या

वर्ष	निर्विरोध चुनी सीटें	कुल सीटों का प्रतिशत
1978	338	0.73
1983	332	0.74
1988	4200	8.0
1993	1716	2.81
1998	600	1.35
2003	6800	11.0

स्त्रेत : EPW August 12,2006

तृणमूल कांग्रेस ने अपनी शुरुआत कांग्रेस के पुश्तैनी आधार बड़े किसानों–सूदखोरों–व्यापारियों में विभाजन पैदा कर के की। कालांतर में इसमें बड़े पैमाने पर शहरी व ग्रामीण लम्पट–गुण्डा तत्वों की भर्ती की गयी। ये उसकी लम्पट–गुण्डावाहिनी ही थी जो माकपा कार्यकर्ताओं गुण्डावाहिनी के साथ लगातार लड़ती झगड़ती रह सकती थी। तृणमूल कांग्रेस में लम्पट गुण्डा तत्वों की बहुलता के साथ

शोषक वर्गों के बीच इसकी स्वीकार्यता खासी बढ़ती चली गयी। इस तरह के लम्पट तत्व गुण्डागर्दी–जबरन वसूली, से लेकर लूट मार तक करके जनता पर सवार रहते हैं। इस मामले में तृणमूल कांग्रेस माकपा से होड़ कर रही है।

2006 के चुनावों में माकपा को एक बार पिफर बड़ी जीत हासिल हुई। इन चुनावों में माकपा की जीत में किसी हद तक चुनाव आयोग ने भी भूमिका निभायी। चुनाव आयोग ने भारी सैन्य बल तैनात कर स्वतंत्र चुनाव कराने का प्रयास किया। करीब **13** लाख नाम मतदाता सूची से हटाये गये। चुनाव आयोग व सैन्य बलों की मौजूदगी का माकपा ने कड़ा विरोध दर्ज कराया। लगभग दो माह तक बंगाल में सैन्य बलों की मौजूदगी को बंगाली जनता ने किसी हद तक पसंद नहीं किया और माकपा ने जनता के इस गुस्से को भुनाने में सपफलता पाई।

हालांकि चुनाव आयोग की कड़ाई का ज्यादा असर शहरों में ही था। और गांवों में पूर्व की तरह ही माकपा के संगठन–पंचायत–प्रशासन के तंत्र ने विपक्षी दलों को प्रचार इत्यादि से रोकने का काम न केवल जारी रखा बल्कि और तेज कर दिया। इस चुनाव में माकपा को पिफर से बंटे विपक्ष का पफायदा भी मिला। शहरों में उदारीकरण के जरिये पैदा हो रहे नये मध्यम वर्ग के रूप में माकपा के आधार में बढ़ोत्तरी हुई।

2006 के चुनावों में भूमि अधिग्रहण की नीति ने अपना प्रभाव दिखाना शुरू कर दिया। दक्षिण–**24** परगना की भागर सीट पर माकपा की हार हुई क्योंकि चुनाव से पूर्व यहां भूमि अधिग्रहण के प्रयास हुए।

भाजपा के केन्द्र के शासन से उसके प्रति मोहभंग ने भी तृणमूल–भाजपा गठजोड़ में लोगों की रुचि को कम किया। परिणाम स्वरूप जहां कांग्रेस का मत प्रतिशत बढ़ा वहीं तृणमूल के वोटों के प्रतिशत में गिरावट हुई।

2006 के चुनावों में भारी जीत को बुद्धदेव सरकार ने अपनी नवउदारवादी नीतियों के प्रति जनता के समर्थन के रूप में प्रचारित किया। और इसी के साथ इन नीतियों पर तेजी के साथ आगे बढ़ना शुरू किया।

कृषि से बाहर नये रोजगार के अवसर न होने से उद्योगों के लिए भूमि अधिग्रहण को नंदीग्राम–सिंगूर की देहाती जनता ने अपनी आजीविका के अन्तिम आसरे को भी छीनने के रूप में ग्रहण किया। जिस तानाशाही पूर्ण ढंग से माकपा सरकार ने पंचायत आदि को दर किनार कर सरपट भूमि अधिग्रहण की घोषणा कर डाली उससे किसान एक झटके से माकपा व सरकार के खिलापफ खड़े हो गये। यहां तक कि ढेरों माकपा के समर्थकों तक को सरकार का तानाशाही पूर्ण ढंग पसंद नहीं आया। परिणाम स्वरूप माकपा के कल तक मूक समर्थक रहे किसान–सर्वहारा उसके खिलापफ लड़ने को तैयार हो गये। कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों से लेकर ममता बनर्जी तक ने उन्हें संघर्ष में नेतृत्व व सहयोग दिया। सरकार के क्रूर दमन ने नंदीग्राम–सिंगूर की मेहनतकश जनता को माकपा से और दूर किया।

नंदीग्राम–सिंगूर व बाद में लालगढ़ में आदिवासी संघर्ष ने जहां एक ओर भूमि अधिग्रहण के प्रति जनता के गुस्से को उजागर किया वहीं माकपा के वहां के गांवों में, सांगठनिक ताने–बाने को छिन्न–भिन्न कर डाला। माकपा के खिलापफ खड़े होकर लड़ने की हिम्मत पूरी बंगाल की ग्रामीण जनता में पैदा की। तृणमूल नेत्री ममता बनर्जी ने बड़ी कुशलता से जनता के गुस्से को अपने पक्ष में भुनाने में सपफलता पायी।

माकपा की राष्ट्रीयता के संघर्षों के प्रति पूंजीवादी नीति ने उसे यहां तक पहुंचा दिया है कि वह न केवल देश में उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के आत्मनिर्णय के अधिकार का समर्थन नहीं करती बल्कि देश में मौजूदा व्यवस्था के दायरे में छोटे राज्यों के गठन की भी विरोधी है। गोरखालैण्ड के मसले पर भी यही नीति अपना कर वहां की जनता की आकांक्षा का उसने निरंतर दमन किया। गोरखालैण्ड की जनता भी क्रमशः माकपा के खिलापफ खड़ी होती चली गयी।

इसके साथ ही मुस्लिम नवयुवक रिजवानुर की हत्या व सच्चर कमेटी की रिपोर्ट ने बंगाल में मुस्लिमों की दुर्दशा को उजागर किया। माकपा का अभी तक स्थापित 'सेक्युलर' चेहरा इस रिपोर्ट से बंगाल के मुस्लिमों के सामने तार–तार हो गया।

नंदीग्राम–सिंगूर–लालगढ़ से बुद्धिजीवी–लेखकों–मानवाधिकार कार्यकर्ताओं का माकपा से मोहभंग व तृणमूल के समर्थन में आ डटने ने माकपा के आगामी चुनाव में हार की पटकथा तैयार कर दी।

2011 का चुनाव माकपा विरोधी लहर के साथ प्रमुख विपक्ष ;कांग्रेस–तृणमूलद्ध के एकजुट होने के चलते भी माकपा के लिए भयानक साबित हुआ। माकपा की करारी हार हुई और उसकी सीटों व वोटों के प्रतिशत दोनों में खासी गिरावट हुई। ग्रेटर कलकत्ता की **66** सीटों में माकपा गठबंधन को मात्र एक सीट प्राप्त हुई। शहरी इलाके में उसे **52** में से एक भी सीट नहीं मिली। अर्द्ध शहरी **45** सीटों में मात्र **5** व ग्रामीण **197** सीटों में **57** सीटें प्राप्त हुई ;देखें तालिका **9**द्ध

तालिका–9

क्षेत्रवार विश्लेषण 2011 चुनाव

	वाम मोर्चा			टी.एम.सी. +	
क्षेत्र	**कुल सीटें**	**सीट**	**प्रतिशत**	**सीट**	**प्रतिशत**
ग्रामीण	197	57	42.7	136	45.7
अर्द्ध शहरी	45	5	39.4	39	50.5
शहरी	52	0	36	52	57.1
कुल	294	62	41.1	227	48.4

स्त्रेत : EPW 18 June,2011

माकपा की इस हार को तमाम लोगों ने माकपा के राजनैतिक अंत के बतौर प्रस्तुत करना शुरू कर दिया है। अगर इतनी दूर न भी जायें तो इतना तो तय ही है कि माकपा **34** वर्षों के लम्बे काल सरीखे लम्बे शासन के लिए दोबारा सत्तासीन अब नहीं हो सकती। हां तृणमूल व माकपा राजस्थान–म.प्र. की भाजपा–कांग्रेस की तरह हर **5** वर्ष में सत्ता की अदला–बदली जरूर कर सकती हैं।

निष्कर्ष

अपनी पैदाइश के समय से ही संशोधनवादी हो चुकी माकपा पूंजीपति वर्ग की ही सेवक पार्टी है। सत्ता में रहने पर पूंजीपति वर्ग के आम हितों में काम करना ही इसका उद्देश्य है। **1970** के दशक में सत्तासीन होने पर इसने देश के पूंजीपति वर्ग की आम नीतियों के दायरे में कुछ सुधारवादी कदम मसलन भूमि सुधार आदि को अन्य राज्यों की तुलना में ज्यादा मात्रा में लागू किया। इस प्रक्रिया में उसने न केवल अपने संगठन का प्रसार किया बल्कि संगठन पंचायत–प्रशासन की तिकड़ी कायम कर ग्रामीण बंगाल में वर्चस्व स्थापित कर लिया। **1980** के दशक में कृषि में तेजी का इसे पफायदा मिला।

इस दौरान इसने आंदोलनकारी रूप त्याग कर वर्ग सहयोग को व्यवहार में निर्लज्जता से प्रदर्शित किया। गांव व शहर की वर्चस्वकारी ताकतें इसके संगठनों में भी वर्चस्व की स्थिति में पहुंच गयी।

1990 के दशक में भारत के शासक वर्ग द्वारा अपनायी नई नीतियों के खिलापफ बंगाल की माकपा न तो जा सकती थी और न ही इसकी उसे कोई आवश्यकता थी। इन नीतियों के दायरे में सुधार के, राहत के कार्यो की जगह बेहद संकुचित थी बल्कि इन नीतियों में यह निहित ही था कि जनकल्याण के कामों से राज्य खुद को पीछे खींचे। बंगाल में भी यही किया गया। कृषि विकास दर थमने के साथ पैदा हुए कृषि संकट, उद्योगों की दुर्दशा ने ग्रामीण व शहरी मेहनतकशों की दुर्दशा को लगातार बढ़ाया। बेरोजगारी आसमान छूने लगी। छोटे असंगठित उद्योगों की संख्या कुछ बढ़ी पर इसमें होने वाली कमाई गुजारे लायक भी नहीं थी। ऐसे में गांव व शहर दोनों में जनता की बदहाली व माकपा शासन के प्रति गुस्सा बढ़ता चला गया।

माकपा के प्रति जनता के बढ़ते गुस्से ने **1990** के दशक से ही चुनावों में अपने को अभिव्यक्त किया परन्तु अगले दो दशकों तक सत्तासीन बने रहने के पीछे कुछ अन्य बातें काम कर रहीं थीं। इसमें ग्रामीण स्तर पर माकपा के किये भूमि सुधार से लाभान्वित लोगों का माकपा के समर्थन में बने रहना एक छोटा कारक था। बड़ा कारक माकपा के ग्रामीण संगठन ;किसान संगठन–मजदूर संगठन आदिद्ध का पंचायतों पर नियंत्रण कर ग्रामीण जीवन को अपनी जकड़ में लेना था। यह जकड़बंदी इतनी मजबूत थी कि सामान्यतया विधवा पेंशन से लेकर घरेलू उद्योग चलाने तक के लिए माकपा के साथ खड़े होना लोगों की मजबूरी बना दी गयी। विरोध में खड़े होने वालों को माकपा की गुण्डावाहिनी द्वारा उत्पीड़न–दमन ने ग्रामीण अवाम के दिलों में ऐसी दहशत कायम कर दी जो तीन दशक बाद जाकर ही टूटी।

शहरों के स्तर पर सरकारी कर्मचारी–अभिजात मजदूरों के संगठनों से लेकर असंगठित क्षेत्र के स्वरोजगार में जुटे मालिक–मजदूर सब माकपा के ताने–बाने से जुड़े थे। इसने गांवों जैसा आधार तो नहीं पैदा किया पिफर भी बड़ी संख्या में समर्थक जरूर पैदा किये।

माकपा संगठन के ताने–बाने की विशालता इसी से स्पष्ट है कि लगभग **5.6** करोड़ मतदाता वाले बंगाल में इसके संगठनों से जुड़े लोगों की संख्या करीब डेढ़ करोड़ है।

संगठन व इसके जरिए जनजीवन पर जकड़बंदी ही वह कारक था जिससे ग्रामीण जनता माकपा से गुस्सा रखने के बावजूद उसे वोट देती रही। इस प्रवृत्ति के बने रहने में कमजोर विपक्ष की भी भूमिका रही। लम्बे समय तक जनता के दिमाग में **72.77** के निरंकुश कांग्रेसी शासन की याद ताजा रही जिसकी ओर वह लौटना नहीं चाहती थी। ऐसे में माकपा के साथ रहना उसे तृणमूल–भाजपा या कांग्रेस के साथ जाने से बेहतर लगता था।

2006 के बाद के नंदीग्राम–सिंगूर–लालगढ़ के आंदोलनों ने बंगाल की मेहनतकश जनता के निरन्तर गुस्से के विस्पफोटक हो जाने को अभिव्यक्त किया। भूमि अधिग्रहण के खिलापफ संघर्ष ने समूचे बंगाल में माकपा के प्रति आक्रोश को और तीखा किया। इन अर्थों में जनता में माकपा की जकड़बंदी से बाहर निकलने का साहस इन आंदोलनों ने पैदा किया। ममता बनर्जी की अपने राजनैतिक स्वार्थों के लिए सक्रिय भूमिका ने उसे पफायदा पहुंचाया। इन अर्थों में इन आंदोलनों ने माकपा के पतन में उत्प्रेरक की भूमिका निभायी।

माकपा की **2011** की हार नवउदारवादी नीतियों के दो दशकों में जनता की बदहाली के पफूट पड़ने की अभिव्यक्ति के साथ माकपा के सामाजिक पफासीवादी ताने–बाने से जनता की मुक्ति की आकांक्षा भी थी।